WWW.VITHIKA.ORG

अंक 04

सितम्बर अंक

वीथिका पत्रिका

साहित्य , कला, विज्ञान और संस्कृति को समर्पित

मै या , मैं तो चं द - खि लौ ना लैं हों

संपादक मंडल

अर्चना उपाध्याय
प्रधान संपादक

चित्रा मोहन
मुख्य सलाहकार संपादक

सुमित उपाध्याय
प्रबंध संपादक

वीथिका परिवार

श्री मनोज कुमार सिंह

श्री अविनाश पाण्डेय

डॉ अखिलेश पाण्डेय

जय श्री

डॉ शिवमूरत यादव

उज्जवल उपाध्याय

अश्विनी तिवारी

अर्चिता उपाध्याय

वेब डिज़ाइन
रोशन भारती

संरक्षक
यशिका फाउंडेशन, मऊ

संपादकीय समिति

डॉ मोहम्मद ज़ियाउल्लाह

डॉ धनञ्जय शर्मा

डॉ सुधांशु लाल

एड. सत्यप्रकाश सिंह

विनोद कोष्टी

श्री नन्दलाल शर्मा

कवर पेज संपादक
पूजा मद्धेशिया

कार्टून संपादक
कृतिका सिंह

www.vithika.org

वीथिका ई -पत्रिका

UDYAM-UP 55 0010534

vithikaportal@gmail.com

आपकी गलियां

अंक 04

सितम्बर 2023

गलियों की बात 04

भारत और चंद्रयान 3 05

बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र 08

गांधी जी की एक समाधि 11

हम याद बहुत आएंगे 13

फिर फिर जन्मी पार्वती
शिव को वरने 17

हिंदी के बहाने से 19

भाषा : जंगली कबूतर और मुटरी 20

हास्य व्यंग्य : सुरंगों का खतरा 21

वृन्दावन : यात्रा संस्मरण 23

सोंधी मिट्टी 25

कहानी - और वो चला गया 28

गलियों की बात

अर्चना उपाध्याय
प्रधान संपादक

भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान केंद्र ने चंद्रयान 3 को चाँद पर पहुंचा कर भारत ही नहीं मानवता के इतिहास में अविस्मरणीय अध्याय लिखा है । इस उड़ान ने भारत के हर नागरिक का सिर ऊँचा उठा दिया ।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर जी से जब चाँद ने कहा कि ऐसे लोगों को लाखों बार देखा है जो चांदनी पर बैठ सपने देखते हैं, तो दिनकर जी ने उस चाँद को सचेत किया था

स्वर्ग के सम्राट को जाकर खबर कर दे,
“रोज ही आकाश चढ़ते जा रहे हैं वे
रोकिये जैसे बने इन स्वप्न वालों को
स्वर्ग की ही ओर बढ़ते आ रहे हैं ये”

निश्चित ही वैज्ञानिकों के इस सफलता ने शोध के नये द्वार खोलने के अवसर प्रदान कर दिए हैं, भारत जल्द ही अपनी संस्कृति, साहित्य, कला और विज्ञान से एक ऐसे समाज को सच बना पुरे विश्व के सामने रखने जा रहा है जिसके सपनों को भी आने वाला समय पूरी गंभीरता से लिखता दिखेगा ।

भारत और चंद्रयान 3

डॉ. सुधांशु लाल

यूं तो चाँद हमेशा से मनुष्य के लिए कौतूहल का विषय रहा है, हमारी कहानियों, किस्सों और कविताओं मे चाँद को मामा से ले कर प्रेमी, प्रेयसी तक कह कर बुलाया गया है। कभी वो माथे की बिंदिया की तरह देखा गया तो कभी कान के बाले जैसा, लेकिन फंतासी और कल्पना के अलावा ये खगोलीय खोज और अंधविश्वास का भी केंद्र रहा है। जहां एक तरफ ये समय, माह और साल की गणना करने के काम आता, वहीं अमावस से ले कर पूनम तक तमाम रीति-रिवाज और अन्य मिथकीय कहानियां भी इससे जुड़ी हैं।

आज जब भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान केंद्र के अध्यक्ष एस. सोमनाथ जी के कुशल नेतृत्व व चंद्रयान 3 के मिशन निदेशक एस. मोहनकुमार जी के कठिन परिश्रम से भारत का चंद्रयान 3, 23 सितम्बर, 2023 को चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर उतर चुका है तब ये दिन न केवल भारत के लिए बल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिए एक ऐतिहासिक दिन है। लेकिन यहाँ तक पहुँचने का सफर उससे भी ज्यादा रोमांचकारी है।

एक देश, जो आज से सिर्फ छिहतर साल पहले ब्रिटेन का गुलाम था और उससे पहले राजशाही और सामंतवादी व्यवस्था में जकड़ा हुआ था । उस देश के लिए चाँद पर पहुँचना कई मामलों मे क्रांतिकारी है। यह इस देश के वैज्ञानिकों के अथक प्रयास और नेताओं की दूरदृष्टि का परिणाम है। देश के आज़ाद होने के समय देश भूखमरी, कुपोषण, साम्प्रदायिकता, जातिवाद और अंधविश्वासों में जकड़ा हुआ था । उसी समय में दुनिया के दूसरे विकसित देश अन्तरिक्ष और चाँद पे जाने की सोचते हैं और एक दशक के बाद ये मुमकिन भी कर पाते हैं। जब 4 अक्तूबर 1957 को सोवियत संघ द्वारा पहला उपग्रह स्पुतनिक । अन्तरिक्ष में सफलतापूर्वक भेजा गया और ये सिलसिला यहीं नहीं रुकता और कुछ दिनों बाद ही 3 नवम्बर 1957 को सोवियत रूस द्वारा अन्तरिक्ष मे पहली बार एक कुत्ते "लाइका" को स्पुतनिक II से अन्तरिक्ष में भेजा गया।

उसके दो साल बाद 14 सितबर 1959 के लुना II नामक अन्तरिक्ष यान पहली बार चाँद पर भेजा गया, उसके बाद लुना III ने 7 अक्तूबर 1959 में ही चाँद की दूसरी तरफ की तस्वीरें भेजना शुरू कर दीं ।

चूंकि उस समय शीतयुद्ध शुरू हो चुका था तो अमेरिका भी कहाँ पीछे रहने वाला था, उसने भी अपना अन्तरिक्ष मिशन तेज किया और रूस और अमेरिका की ये लड़ाई अन्तरिक्ष में भी पहुँच गयी। 1 अप्रैल 1960 को अमेरिका ने भी अपना पहला सैटिलाइट TIROS I अन्तरिक्ष मे भेज दिया । इसके बाद तो जैसे ये लड़ाई खुले रूप में आ गयी और सोवियत संघ के राष्ट्रपति निकिता ख्रुश्चेव ने ये ऐलान कर दिया कि हमने पहला अन्तरिक्ष यान भेजा था और हम ही पहला इंसान अन्तरिक्ष में भेजेंगे। और साल 1961 में 12 अप्रैल को VOSTOK I में "यूरी गैगरिन" नामक अन्तरिक्ष यात्री को अन्तरिक्ष मे भेज कर इतिहास रच दिया और अन्तरिक्ष की सीमा इंसानों के लिए खोल दिया । 16 जून 1963 को सोवियत संघ ने पहली महिला "वींटिना ट्रेशकोवा" को भी अन्तरिक्ष मे भेज दिया।

उसके बाद अमेरिका ने ये चुनौती स्वीकार की और 24 दिसम्बर 1968 को चाँद की कक्षा मे इंसानको भेज दिया और एक 20 जुलाई 1969 "अपोलो 11" में "नील आर्मस्ट्रांग" चंद्रमा की सतह पर उतरने वाले दुनिया के पहले व्यक्ति बन जाते हैं । इसके बाद का अन्तरिक्ष स्टार-वार बन जाता है, एक के बाद एक अन्तरिक्ष यान और सैटेलाइट दोनों देशो के द्वारा भेजे जाते हैं और 1990 के बाद इस प्रतिस्पर्धा में दुनिया के दुसरे देश भी आ जाते हैं । आज बिना सैटिलाइट के हमारा जीवन एक पल भी गुजर पाना मुश्किल है, रेल से लेकर हवाई जहाज तक, मोबाइल से लेकर टीवी तक अब सब कुछ सैटेलाइट पर ही निर्भर है।

भारत मे इसकी शुरुआत 1920 से ही मानी जाती है जब एस. के. मित्रा, सी. वी. रमन और मेघनाद देसाई जैसे वैज्ञानिक इसका अध्ययन करना शुरू करते हैं। लेकिन इसको मूर्त रूप लेने मे 40 साल लगे जब दूरदृष्टि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और देश के महान वैज्ञानिक विक्रम साराभाई ने 1962 में Indian National Committee for Space Research (INCOSPAR) की स्थापना की। और एक साल के भीतर अपना प्रथम रॉकेट अन्तरिक्ष मे भेज दिया। ये कमेटी ही 1969 आते आते भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र (ISRO) का रूप लेती है। सिर्फ 6 साल के अंदर भारत ने अपना पहला सैटेलाइट आर्यभट्ट अन्तरिक्ष में स्थापित किया। उसके बाद 1980 में रोहिणी RS I नामक सैटेलाइट भी अन्तरिक्ष मे भेजा गया। और ये सिलसिला यहीं नहीं रुकता और 1984 मे सोवियत संघ के मिशन में भारत ने अपने पहले अन्तरिक्ष यात्री "राकेश शर्मा" को भेजा और उसके बाद 2008 मे चंद्रयान, 2014 मे मंगलयान से मंगल पर पहुंचे और अब 23 अगस्त 2023 को चंद्रयान को चन्द्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर भेज कर एक और कीर्तिमान गढ़ दिया।

अंत में, चाँद पर पहुँचने के कई मायने होते हैं, जब कोई मुल्क चाँद पर पहुँचता है तो वो इस जिम्मेदारी के साथ भी पहुँचता है कि धरती पर जो बुराइयाँ है, जो अवैज्ञानिकवाद और अंधविश्वास है उसको खत्म करने की दिशा में भी आगे बढ़ रहा। वैज्ञानिक चेतना का विकास करना, जिसमें सबसे बड़ा हिस्सा शिक्षा का है, उसके बाद, परिवार, समाज और सरकारों का भी कि वो सही दिशा मे हो रहा है या नहीं । चंद्रयान की सफलता से भारत में एक नयी ऊर्जा आएगी जिससे हमारे बच्चों की विज्ञान मे रुचि बढ़ेगी और उनका दृष्टिकोण बदलेगा जिससे न केवल विज्ञान के क्षेत्र में बल्कि सभी क्षेत्र में चौमुखी विकास होगा, चाहे वो शिक्षा के क्षेत्र में हो, चाहे वो आर्थिक विकास हो या चाहे वो सामाजिक विकास। वैज्ञानिक चेतना समाज मे व्याप्त भेदभाव और शोषण को भी कम करती है।

हमारे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी भी देश के अंदर युवाओं में ज्ञान-विज्ञान के प्रति रूचि की अभिवृद्धि को लेकर संकल्पबद्ध हैं । सरकारों को निश्चित ही विज्ञान और शिक्षा के ऊपर खर्च को बढ़ाना चाहिए, जिससे देश के अंदर की प्रतिभा का पलायन न हो और उन्हें वही सुख-सुविधा मिले जो उनको विदेशोंमें मिलती है। विज्ञान की तरक्की में ही देश की तरक्की है और देश की तरक्की मे समाज की तरक्की है ।

एस. सोमनाथ, चेयरमैन, ISRO

एस. मोहनकुमार,मिशन निदेशक

बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र

173 वीं जयंती पर नमन

सुमित उपाध्याय

कार्टूनिस्ट :कृतिका सिंह जी

लेखन की रचना प्रक्रिया सदैव अपनी ओर आलोचकों, समीक्षकों का ही नहीं अपितु पाठकों का भी ध्यान आकर्षित करती रही है । किसी व्यक्ति के सामने ऐसी कौन सी परिस्थितियां आती हैं कि वह कलम उठा लेता है, और कलम भी बस स्वान्तः सुखाय नहीं बल्कि लोक के मंगल की साधना के लिए, उसका स्व सबकी अस्मिता से जुड़ जाता है । वह धीरे-धीरे समाज का बन जाता है ।

अतः किसी लेखक के साहित्य के अध्ययन हेतु हमें उसकी रचना प्रक्रिया को ध्यान से देखने की आवश्यकता होती है । आधुनिक हिंदी के पितामह कहे जाने वाले महान रचनाकार भारतेंदु हरिश्चंद्र की रचना प्रक्रिया कुछ विशेष दृष्टि की मांग करती है, इसलिए नहीं की वह स्वयं महान थे अपितु इसलिए की अपने नाटकों में उन्होंने एक महान भारत की संकल्पना की थी जो स्वदेशी वस्तुओं पर निर्भर होगा, जिसे उसका खोया हुआ गौरव पुनः प्राप्त होगा ।

किसी लेखक के अध्ययन हेतु उसकी सर्जनाशक्ति अर्थात उस साहित्यकार की नैसर्गिक प्रतिभा और उसका व्यक्तित्व, उसकी परम्परा अर्थात जो साहित्यिक व सांस्कृतिक परम्पराएँ उसके समय में चली आ रहीं हों, उसका वातावरण जिसमें वो रहता हो, जिससे उसने भाषा पायी हो, उसके अंदर की प्रतिभा का परम्परा और वातावरण से उपजा द्वंद्व जिससे वह प्रेरित हो तथा अंत में इस द्वंद्व में संतुलन स्थापित होने की स्थिति, इन सब तत्वों का अध्ययन करना होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने अपनी सर्जनाशक्ति का परिचय सात वर्ष की आयु में ही दे दिया था जब उन्होंने अपने पिता जी के आशीर्वाद से पहली कविता लिखी –

“लैं व्यौढ़ा ठाढ़े भये, श्री अनिरुद्ध सुजान।
बाणासुर की सैन को हनन चले भगवान ॥”

महज 35 वर्ष की अल्पायु जिसमे 18 वर्ष का साहित्य-जीवन हो उसमें 250 के लगभग पुस्तकें लिखने के साथ-साथ समूचे साहित्य जगत के लिए आगे की मार्गदर्शिका भी देकर भारतेंदु बाबू ने अपनी सर्जनाशक्ति तो दिखा ही दी थी ।

अब आते हैं उस वातावरण पर जिसमें भारतेंदु बाबू जैसी महान साहित्यिक प्रतिभा का जन्म हुआ । भारतेंदु हरिश्चंद्र जी का जन्म 9 सितम्बर 1850 को काशी में व्रजभाषा के सुकवि और वैष्णव भक्त बाबू गोपालचंद्र के यहाँ हुआ । इनका लालन-पालन विशुद्ध साहित्यिक-सांस्कृतिक वातावरण में हुआ। इनके पिताजी वैष्णव भक्त होने के साथ विचारों से प्रगतिशील भी थे । लेफ्टिनेंट गवर्नर थॉमसन साहब के समय में काशी में जब लड़कियों का पहला स्कूल खुला तो हरिश्चंद्र जी की बड़ी बहन पढने के लिए भेजी गयी ।

भारतेंदु जी के पूर्वज सेठ अमीचंद के सम्बन्ध मुर्शिदाबाद के नवाबों से अत्यंत मधुर थे । पांच वर्ष की आयु में ही माँ की असमय मृत्यु ने बालक हरिश्चन्द्र से ममता का स्नेह छीन लिया और दस वर्ष की अल्पायु में ही पिता भी न रहे । उत्तराधिकार में उनको रईसी के साथ भारी भरकम आर्थिक ऋण भी मिला ।

भारतेंदु के समय का समाज दासता की बेड़ियों से जकड़ा हुआ था और भारतेंदु इसे बहुत बारीकी से न केवल देख रहे थे अपितु इसके कारणों पर भी गहनता से विचार कर रहे थे । पारिवारिक ऋणों से अधिक उनको राष्ट्र ऋण व समाज ऋण की चिंता थी। बनारस की ठठेरी गली में स्थित उनकी कोठी में झाड़-फानूस, कालीन, नक्काशीदार दरवाजे, फर्नीचर आदि के बीच भारतेंदु बाबू अपनी लम्बी मिरजई में गिरदा के सहारे बैठे हुए बेचैन रहते थे । औपनिवेशिक सत्ता का शोषण, सामाजिक रुढियों में उलझा हुआ देश उनसे देखा ना जाता था।

1865 में भारतेंदु बाबू अपने परिवार के साथ जगन्नाथ जी गये । उसी यात्रा में इनका परिचय बंग देश की नवीन साहित्यिक प्रगति से हुआ । उन्हें हिंदी में बँगला में जैसी नये ढंग की आधुनिक साहित्यधारा की कमी दिखी। वर्ष 1868 में उन्होंने “विद्यासुंदर नाटक” बँगला से अनुवाद कर प्रकाशित किया । इसी वर्ष उन्होंने “कविवचन सुधा” नामक एक पत्रिका भी निकाली । 1870 में उन्होंने “कवितावर्धिनी सभा” और 1873 में “पेनी रीडिंग क्लब” की स्थापना की । वर्ष 1873 में उन्होंने “ हरिश्चन्द्र मैगजीन” नाम की एक मासिक पत्रिका निकाली जिसका नाम 8 अंकों के बाद “हरिश्चन्द्रचन्द्रिका” हो गया । इसी वर्ष धर्म और ईश्वर सम्बन्धी विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए “तदीय समाज” की स्थापना की ।

हरिश्चन्द्र जी ने साहित्य को पहली बार सामाजिक कर्म की अवधारणा से जोड़ा । वर्ष 1874 में भारतेंदु बाबू ने स्त्री शिक्षा के लिए “बालबोधिनी” पत्रिका निकाली । 1873 में उन्होंने अपना पहला मौलिक नाटक “वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति” नामक प्रहसन लिखा जिसमे धर्म और उपासना नाम से समाज में प्रचलित अनेक बुराईयों का जघन्य रूप दिखाते हुए केवल अपनी मानवृद्धि की फ़िक्र में रहनेवालों पर व्यंग्य किया ।

अब आते हैं भारतेंदु बाबू के समय स्थापित साहित्यिक परम्पराओं पर, उस समय ही नहीं बल्कि पिछले लगभग पांच शताब्दियों से हिंदी क्षेत्र से नाटक गायब था, और भारतेंदु बाबू ने हिंदी के आधुनिक युग की शुरुआत सीधे नाटकों से की ।

इसके पीछे मूल कारण सामने आता है पुनर्जागरण आन्दोलन । पुनर्जागरण आन्दोलन एक व्यापक सामाजिक चेतना और उसके अभिव्यक्ति की मांग कर रहा था । और यह अभिव्यक्ति रंगमंच से ही संभव हो सकती थी । नाटक सभी साहित्य और कलाओं के मध्य अपनी प्रकृति में सबसे अधिक सामाजिक है। रंगमंच पर नाटक को अनेक प्रकार के कलाकार प्रस्तुत करते हैं और उसका रसास्वादन समाज के रूप में किया जाता है । सो भारतेंदु बाबू ने चेतना के जागरण के लिए नाटक कला का चुनाव कर अद्भुत कार्य किया ।

भारतेंदु बाबू ने अपने समय की स्थापित मान्यताओं और अपने भीतर चल रहे वैचारिक द्वंद्व के बीच संतुलन स्थापित करते हुए अपने साहित्य साधना के लक्ष्य को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया, व न केवल स्वयं अपितु लेखकों, विचारकों के एक बड़े शक्तिशाली वर्ग को इस यज्ञ में लगाया। उनके सभी कार्यों के मूल में भारतवर्ष की उन्नति की भावना ही थी। साहित्य उनके लिए साध्य नहीं था अपितु जनता को जगाने का साधन था । वे स्थापित साहित्यकारों पर आवश्यकता से अधिक निर्भर नहीं थे । मई 1879 में “कवि वचन सुधा” में उन्होंने लोकसाहित्य की प्रचार सम्बन्धी विज्ञप्ति निकाली जिसमे उन्होंने जातीय संगीत की छोटी-छोटी पुस्तकों के बनने का आह्वान किया और इसे गाँव-गाँव में साधारण लोगों में प्रचार हेतु भेजने का उद्देश्य रखा ।

अपनी उदारता, गुणग्राह्यता के कारण बहुत कम समय में भारतेंदु बाबू लोकप्रिय हो गये ।

उनके चुम्बकीय व्यक्तित्व और जन साहित्य की रचना ने काशी में उनके नेतृत्व में लेखकों का एक शानदार मंडल तैयार कर दिया । इसमें पं प्रताप नारायण मिश्र, ठाकुर जगमोहन सिंह, चौधरी बदरी नारायण प्रेमघन, पं बाल कृष्ण भट्ट, अम्बिकादत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी, मोहन लाल विष्णु लाल पांड्या, काशीनाथ खत्री और राधाकृष्ण दास प्रमुख थे । इसके साथ ही भारतेंदु बाबू अखिल भारतीय स्तर पर महान साहित्यकारों के सम्पर्क में थे । “हरिश्चन्द्र चन्द्रिका” के सहायक संपादकों में ईश्वर चंद विद्यासागर (बंगाल), पं दामोदर शास्त्री (बिहार), राधाकृष्ण (लाहौर), नवीन चन्द्र राय (पंजाब) आदि प्रमुख थे ।

भारतेंदु बाबू चन्द्रिका के लिए बड़ी तेजी के साथ लेख और नोट लिखते थे, वो विषय को बड़े ढंग से सजाते थे। इन सभी लेखकों में मौलिकता थी । वे अपनी भाषा को पहचानते थे । इस मंडल के वाक्यों का अन्वय सरल होता था ।

इनके लेखों में चमत्कारिता के स्थान पर भावों की मार्मिकता पायी जाती थी । इन सब कारणों से ये नाटक उनके गीत लोगों के बातचीत का हिस्सा बनते गये । भारत का समाज पुनर्जागृत होने लगा।

भारतेंदु बाबू स्वयं बड़े जिंदा इंसान थे, जिन्दादिली उनके अंदर कूट-कूट कर भरी थी । 6 जनवरी 1885 को जीवन के अंतिम समय में भी जब सवेरे उनसे हाल पूछा गया तो उन्होंने कहा, “हमारे जीवन के नाटक का प्रोग्राम नित्य नया नया छप रहा है- पहले दिन ज्वर की, दुसरे दिन दर्द की, तीसरे दिन खांसी की सीन हो चुकी, देखें लास्ट नाईट कब होती है ।”

वो भारत को जानते थे, उसकी पतित दशा को देख नहीं पाते थे और इसका कारण वो धर्म-जाति, अशिक्षा, आलस, कूपमंडूकता को बताते थे । संसार में बहुत कम ऐसे साहसिक रचनाकार हुए जो इस हद तक अपने समाज को समझते हों ।

भारतेंदु बाबू ने हिंदी भाषा व उसके समाज को गहरी नींद से जगाया, विलासिता के कुंए से बाहर निकाल उसे समाज में स्थापित कर दिया । वह यारों के यार थे, कवियों के कवि थे, सज्जनों में अति सज्जन और बांकों में महाबांके ।

पुणे के आगा खां महल में भी है गांधी जी की एक समाधि

विजयवीर सहाय

सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने महात्मा गांधी को 9 अगस्त 1942 से 6 मई 1944 तक पुणे में कल्याणी नगर स्थित विश्व प्रसिद्ध आगा खां महल के कमरों में नज़रबंद करके रखा था। उनके साथ ही उनकी धर्म पत्नी कस्तूरबा तथा सचिव महादेव भाई देसाई भी नज़रबंद थे। यहीं पर पहले महादेव भाई और 22 फरवरी 1944 को महाशिवरात्रि के दिन गंभीर रूप से बीमार कस्तूरबा का निधन हो गया और उनकी समाधियां परिसर में ही एक स्थल पर बनाई गईं।

यह तो सभी जानते हैं कि महात्मा गांधी की समाधि राजघाट, दिल्ली में है लेकिन यह कम ही लोग जानते होंगे कि पुणे के आगा खां महल परिसर में समाधि स्थल पर भी उनके भस्मावशेष की एक समाधि उनकी धर्मपत्नी कस्तूरबा की समाधि के निकट ही बनाई गई है।

महात्मा गांधी के ऐतिहासिक स्मारक के रूप में तब्दील इस महल में आने वाले दर्शानार्थी समाधि स्थल पर भी जाकर श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। महल का परिसर कई एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है और प्रवेश द्वार से महल तथा समाधि स्थल तक जाने के लिए बनी डामर की सड़कों के दोनों तरफ़ पेड़-पौधे और घास के हरे भरे उद्यान भी हैं।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, मुंबई मंडल, मुंबई द्वारा महल के बाहर लगाये गये शिलापट के अनुसार, आग़ा खां महल का निर्माण ईसवी सन् 1892 में तृतीय आग़ा खां, सुल्तान मोहम्मद शाह आग़ा खां ने करवाया था। वह खोजा इस्माइली सम्प्रदाय के 48वें गुरु थे। इसका निर्माण उन्होंने

आसपास के सूखा प्रभावित गांव वासियों को रोज़गार देने के लिए करवाया। निर्माण कार्य 5 साल में पूरा हुआ जिसमें करीब 12 लाख रुपये खर्च हुए और एक हज़ार लोगों को भरपूर रोज़गार मिला। सन् 1969 ई. में प्रिंस करीम शाह अल् हुसेनिम चतुर्थ आग़ा खां भारत आये और उन्होंने यह महल और उसके आसपास की ज़मीन को गांधी जी और उनके दर्शन के यादगार स्मारक के रूप में भारत सरकार के गांधी स्मारक निधि को दान कर दिया। अब यह भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और गांधी जी के जीवन से जुड़ा एक असाधारण राष्ट्रीय स्मारक है।

आग़ा खां महल को भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा गजट में नोटिफ़िकेशन सं. एस.ओ. 255 ई दिनांक 3-3-2003 के अंतर्गत राष्ट्रीय महत्व के स्मारक के रूप में संरक्षित किया गया।

महल के बड़े-बड़े कक्षों में गांधी जी द्वारा इस्तेमाल की गई कुछ वस्तुओं-जैसे बर्तन, चप्पल, कपड़े, माला तथा कस्तूरबा के अंतिम संस्कार के सम्बन्ध में तत्कालीन सरकार को लिखे उनके पत्र आदि का भी संग्रह है। संग्रहालय में गांधी जी के जीवन की कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं से संबंधित फोटो, मूर्तियां आदि संग्रहीत हैं। महल के उस कमरे में जहां नज़रबंदी के दौरान कस्तूरबा ने अंतिम सांस ली, गांधी जी व कस्तूरबा की तमाम फोटो और मूर्तियां हैं। उनसे संबंधित महत्वपूर्ण विवरण और जानकारियां भी बड़े-बड़े पटों पर लिखी हुई हैं। महल परिसर में ही पुस्तकों, खादी के वस्त्रों और हस्त निर्मित कलात्मक वस्तुओं आदि की प्रदर्शनी भी देखने को मिलती है।

नटराज मंच

हम याद बहुत आएंगे भारतेंदु बाबू को समर्पित

आदरणीया चित्रा मोहन जी प्रख्यात व वरिष्ठ रंगमंच निर्देशिका व प्रवक्ता हैं । आप भारतेंदु नाट्य अकादमी से सम्बद्ध रही हैं । "हम याद बहुत आएंगे" महान नाट्यकार व आधुनिक हिंदी के प्रणेता भारतेंदु बाबू को समर्पित आपका मौलिक नाटक है । नाट्य-कला को समर्पित वीथिका के इस मंच पर इस अद्भुत, संगीतमयी नाटक के दुसरे अंक का द्वितीय दृश्य आप पाठकों के सम्मुख है ।

हम याद बहुत आएंगे भारतेंदु बाबू को समर्पित

मौलिक नाटक

लेखिका- चित्रा मोहन

अंक 2 \ दृश्य 2

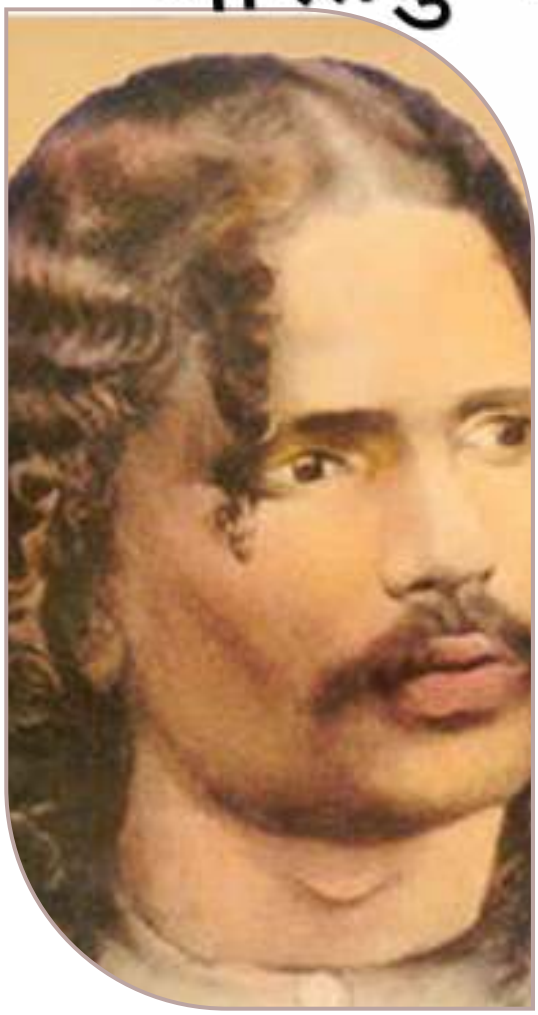

पात्र परिचय

भारतेंदु बाबू उम्र (समयानुसार 28 से 35 वर्ष तक)
लड़की –1- कोरस (नयना)
इशिता - 26 साल (ये भी दृश्यानुसार मन्नो देवी की भूमिका में भी)
चौबे पंडा: उम्र - 50
कोरस: 5 से 6 जनों का
मन्नो देवी: (रुक्मिणी/ललिता की भूमिका)
मल्लिका: (चंद्रावली / राधा)
लड़की – 2 - (सुमुखि) कोरस - (शोहदा, लाला, सोहा आदि कोरस से ही भूमिकाएं करेंगे)

(भारतेंदु की मूर्ति पर प्रकाश के साथ, दूसरी ओर एक प्रकाश वृत्त में खाली मेज, कुछ कागज कलम और जलता लैंप आलोकित होता है। पार्श्व से गंगा की धार बहने का तेज स्वर और मंदिर में घंटा घड़ियाल गूंजने के साथ हल्की सी अजान का ओवर-लैप करता स्वर सुनाई देता है। इतिशा हाथ में भारतेंदु बाबु लिखित 'भारतेन्दु समग्र' लिए हुए प्रकाश वृत्त में प्रवेश करती है मानो कुछ पढ़ती चली रही है।)

इतिशा: ये गंगा की कलकल और घंटा घड़ियाल की ध्वनि सुन रहे हैं न? अनुमान लगाइये कि मैं किस नगरी में हूँ ? क्या ? सही पहचाना काशी नगरी -- भारतेंदु बाबू ने लिखा है, यही जिस मुहल्ले में मैं रहता हूँ उसके एक भाग का नाम चौखम्भा है। इसका कारण वहां की एक मसजिद है जिसे वह कई सौ बरस प्राचीन बताते हैं। उसका कुतबा काल-बल से नष्ट हो गया है पर लोग अनुमान लगाते हैं कि 664 बरस पहले की बनी है। इस मस्जिद में, एक पंक्ति में गोल-गोल पुराने चाल के चार खंभे बने हैं अत एव ये चौखंभा नाम प्रसिद्ध हो गया।
(तभी बात की समाप्ति होते-होते भारतेंदु स्वयं निकल आते हैं और दूसरे अलग स्थान पर जहां भारतेन्दु की मूर्ति है ठीक उसके आगे खड़े होकर अगले संवाद बोल उठते हैं । इतिशा किताब पढने का ही अभिनय- करती है)
भारतेंदु – क्यों भई हिंदुओं, काशी तो तुम्हारा तीर्थ है न? और तुम्हारे वेद मत तो परम प्राचीन है, तो अब क्यों नहीं कोई चिन्ह दिखाते जिस से निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और बिंदुमाधव यहाँ पर थेऔर यहां उनका चिन्ह शेष है, इतना बड़ा काशी का क्षेत्र है और यह उसकी सीमा और यह मार्ग और यह पंचक्रोश के देवता है। सिद्ध करो न,बस तुम तो इतना ही कहोगे, भगवते कालाय नमः, भगवते कालाय नमः और आगे बढ़ जाओगे, तभी तो हिंदुओ और उनके धर्म की ये दशा हो चली है।
(हाथ जोड़ कर मूर्ति की और मुँह कर के फ्रीज होते हैं आगे इतिशा बोलती है।)
इतिशा: हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते हैं कि 'केवल काशी और कन्नौज में वेदधर्म बच गया था. परन्तु मैं ये कैसे कहूँ।

(तभी भारतेंदु सामने घूम कर बोल पड़ते हैं।)
भारतेंदु (स्वयं): परन्तु मैं ये कैसे कहूँ ? वरंच मैं ये कह सकता हूँ कि क्या यह संभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल में जो हिंदुओं की मूर्तियों और मंदिर थे उन्हीं में अन्य धर्मी लोगों ने अपनी मूर्तियां बिठा दी थीं।
इतिशा: अन्य धर्मी से आपका क्या अभिप्राय है बाबूजी
भारतेन्दु: काशी में सब नगरों से विशेष जैन मत था और यही वो लोग दृढ़ जैनी थे। भवतु काल, जो न करे सब आश्चर्य है। क्या ये संभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल में जो हिंदुओं की मूर्तियां और मंदिर थे उन्हीं में जैनों ने अपने काल अपनी मूर्तियां बिठा दी हों?
इतिशा: आपकी इस संभा वना का कोई आधार है क्या?
भारतेंदु: है बिल्कुल है, लोगों की मानसिकता, अपने मत के बाहुल्य पर, अपने धर्म, अपनी वीरता का बाहुबल दिखाने लगती है। एक कहानी बताता हूँ। एक बार की बात है केवल कुछ क्षणों के लिए दिल्ली के सिंहासन पर एक हिन्दु बनिया बैठ गया था उतने ही समय में हिंदुओं ने मस्जिदों में सिंदूर के भैरव बना दिये और कुरान पढ़ने की चौकियो पर व्यास कथा बाँची।
इतिशा (तनिक रोष में):बाबूजी, आप बड़ी सफाई से मुगल आक्रमणकारियों के बारे में स्वयं को बचा ले गए। आपने मस्जिदों पर हिन्दुओं द्वारा सिंदूर के भैरव बनाने की बात तो कही पर इन्हीं मुगलों ने हमारे हिंदू मंदिर - मूर्तियों को नष्ट कर मस्जिद बनाकर, हमारी प्राचीन संस्कृति और धर्म का कितना विनाश किया, ये आप कैसे भूल सकते हैं?
भारतेन्दु: लगता है तुम्हारी रिसर्च अभी पूरी नहीं हुई है इतिशा। अगर तुमने मेरा लिखा "बादशाह दर्पण" पढ़ा होता तो तुम मुझ पर ये प्रहार नहीं करती।
(इतिशा जल्दी-जल्दी पन्ने पलटती है और पढ़ती है)
इतिशा: जब से यहाँ स्वाधीनता सूर्य अस्त हुआ है। (बादशाह दर्पण पेज संख्या 73)उसके पूर्व समय का कोई इतिहास नहीं है। मुसलमान लेखकों ने जो इतिहास लिखे भी हैं उनमें आर्यकीर्ति का लोप कर दिया है। किसी ने सच ही कहा मुसलमानी राज हैजे का रोग है और अंग्रेजी राज क्षय का। उर्दू का शेर है -
(भारतेन्दु बात लपक लेते हैं)
भारतेन्दु: बागबां आया गुलिस्ताँ में कि सैयाद आया
जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।
जाति भेद, पक्षपात, मुसलमानों पर विशेष द्वष्टि आदि से बाकी लोगों का जी और भी उदास होता है। यद्यपि लिबरल दल से हम लोगों ने बहुत सी आशा बाँध रखी है पर वह आशा ऐसी है जैसे रोग असाध्य हो जाने पर विषवटी की आशा। मेरे कहने का आशय किसी की पक्षधरता या अपने हिंदू धर्म की अवहेलना नहीं है। मैं केवल मानसिकता की बात कहता हूँकि सदियों से भारत पर आक्रमण करने वालेआक्रांताओं ने भारत के मंदिरों, मूर्तियो, घन, वैभव संपदा का सर्वनाश कर अपने धर्म के प्रतीक और झंडे गाड़ने का दुस्साहस किया। मुसलमान हो या अंग्रेज़ सबने हमें क्षति पहुंचाई है।
बाकी कोरस: (तालियां बजाते हुए मंच पर आ जाता है)
एक: ये पूर्वाभ्यास है या व्यक्तिगत वाद-विवाद प्रतियोगिता ?
दूसरा: तीन घंटों के लिए पूर्वाभ्यास कक्ष मिला है, बुकिंग के लिए प्रति घंटे सौ रूपये प्रतिदिन की दर से एक माह का किराया कितना हुआ, नौ हजार रूपये । अब नाटक करना कितना कठिन हो गया है? टिकट भी बिकते नहीं। लोगों को टिकट लेने की आदत ही नहीं।
इतिशा: अरे आप लोग ये सब क्या ले बैठे ? चलिये-अपनी भूमिकाओं में मन लगाइये। येकोई वाद-विवाद नहीं बल्कि तत्कालीन भारतेंदु और वर्तमान स्थितियों की प्रांसगिकता पर एक संवाद था (एक पल रुक कर)क्या हुआ? हमारी बात समझ में नहीं आई।
कोरस: (सब एक साथ) आ गई। यू प्लीज कैरी ऑन।
भारतेंदु:
क्यों बे, क्या करने जग में तू आया था, क्या करता है।
गरम - बास की भूल गया सुध मरन हार पर मरता है।

जो विशेष था तुम में पशु से, उसे भूल तू बैठा है।
तो क्यों नाहक हम मनुष्य है, इस ग़रूर से ऐंठा है।
जान बूझ अनजान बना है देखो नहीं पतियाता है।
हरिचंद उस परमातम को, गदहे तू क्यों नहीं भजता है।
(कोरस कान पकड़ कर उठक बैठक करता है । भारतेंदु हंसते हैं)

इतिशा: ये-ये आपने अपने विनय-प्रेम पचासा में लिखा है

कोरस(कवित्त स्वर में): हमने भी पढ़ा है -

खाई खाई के महा मुटेहों
करिहों कद्दू न काम ।
बात बनेहो लंबी चौड़ी
बैठ्यो बैठ्यो धाम।

(गाते-गाते कोरस द्वारा घाट का दृश्य बना लिया जाता है, मुशायरे का दृश्य बन जाता है)

भारतेंदु:ये चिड़ीड़ीमार का टोला, भाँति-भाँति का जानवर बोला ।
लखनऊ दिल्ली, बनारस, पूरब दखिन के मुफ्तखोर शायर जमा हुए हैं, लगे रंग बिरंगी बोलियों बोलने। मैंने भी उनकी आवाज़ ले ली, नही समझ आया?अरे भाई मैने भी मेक्रोफोन की काल (तार) लगा कर वो आवाज़ उसमे बंद कर ली । वो आप भी सुनिए। **(माइक्रोफोन जैसी आवाज़ उभरती है मानो रिकार्ड बज रहा हो)**

कोरस: टे टेटे टे टे
हम है लखनऊ के लाला, अपनी चोंच खोलते हैं और अपनी बात बोलते हैं.. मुलाहिजा फरमाएँ

कोरस:इरशाद - इरशाद

लाला:

गल्ला कटे लगा है कि भैया जो है सो है,
बनियन का गम भवा है भैया जो है सो है।
लाला की भैंसी दुही जाये जब बाल्टी मा
दुगुना पानी मिल जाये भैया जो है सो है।
सगरा गाँव कर्जे में डूबा, भइया जो है सो है।

भारतेंदु : लाला का पेट ब्याज खाके के निकला भैया - --- **(सब कहते हैं :जो है सो है)**

(तभी सामने बैठी ललाइन मुँह पर घूंघट डाले खड़ी हो गई और अंग्रेज मेम साहब लोगों की तालीम पा कर चट से पर्दे से बाहर आकर मंच पर कूद पड़ी / मटक मटक कर गाने लगी)

लड़की/ललाइन(कोरस) –
लिखाय नहीं देत्यो, पढ़ाय नही देत्यो ।
सैंया फिरंगिन बनाए नही देत्यो।
लहंगा दुपट्टा नीक ना लागे -
मेमन वाला गौन (गाऊन) मंतगाय नहीं देत्यो।
(सब वाह-वह करते हैं)
सरसों का उबटन हम न लगइबे
साबुन से देहिया मलाय नहीं देत्यो ।
बहुत दिनों लग खटिया तोड़न
हिंदुन का काहे जगाय नहीं देखो
(सब ताली पीटते हैं)

भारतेंदु: ललाइन साहिबा की आजादी देख कर साहोजी घबरा कर खड़े हो गए और बोले, और क्या बनारसी तड़का लगा कर बोलें।

साहोजी:का भवा आवा है ए राम जमाना कैसा।
कैसी मेहरारू है ई हाय ज़माना कैसा है।
लोग क्रीस्तान भये जाये बनये साहेब
कैसा अब पुन्न धरम गंगा नहाना कैसा।
धोय के लाज सरम पी गए सब लरकन लोग
काहे के बाप मतारी, रहे दादा नाना कैसा।
आँखी के आगे लगे पिये सबै मिल के शराब।
जब चुरूट है तो पान इलायची का खाना कैसा ?
(सब हँसते हैं)
सब के ऊपर लगा टिक्कस, उड़ा होस मोरा
रोवै का चाहिए ई हंसी ठीठी औ ठठाना कैसा ?
(सब तालियाँ बजाते है।)

भारतेंदु: साहोजी की बनारसी सुनते ही लखनऊ के एक शोहदे साहब चार अंगुल की टोपी पहने, अकड़े हुए डटे थे, बिफर पड़े, चटक करबोले -

शोदा (लखनऊवा): ऐ बनिये क्या जो है सो नाहक की बक बक लगाई है। एक कनगुच्छा (चपेटा) इंहों (दूधर) और एक नागड़ मिन्नी (नाक भिन्ना देने वाला थप्पड़) उंधे (उधर चपतगाह (कान के नीचे) पे एक गुदकी (घूंसा) जमाऊँगा तो जो है सो बताना निकल पड़ेगा।

(क्रमशः अगले अंक में .....)

फिर फिर जन्मी पार्वती शिव को वरने
रश्मि धारिणी धरित्री

सुधिजनों को सस्नेह नमस्कार!
मैं धारित्रि धारिणी आज चौमासा और प्रकृति के श्रृंगार को देख कर आह्लादित हूँ। चौमासा, मानसून, वर्षा ऋतु, कितने अनगिनत विदुषी विद्वानों ने करोड़ों पक्तियाँ लिखी होंगी, विमर्श किया होगा। आषाढ़ -श्रावण-भादों(भाद्रपद)-आश्विन और साथ ही आते हैं हमारे तीज त्योहारों के मौसम। आगमन हरियाली का, धरती के जल संचयन का, जल स्रोतों के पुनर्जीवन का। साथ ही पधारते हैं शिव भोले गौरा पार्वती के संग।

जन-जीवन जो आदि काल से प्रकृति से जुड़ा है जिसमें कोई कर्मकांड नहीं ऐसे अवसर ढूँढ ही लेता है। अपनी इच्छा से अपनी सामर्थ्य से जिनको अर्पित करता है, वो शंकर पार्वती जन मानस में क्यों समाये हैं। तीज यानि तृतीया तिथि भारत के हर भाग में अलग अलग समय और तरीके से मनाई जाती है और हर तीज जनमानस के अनुसार शिव पार्वती के प्रेम, अनूठी तपस्या और उनके मिलन का प्रतीक होती है। जो समाज विवाह के इतने कठिन बंधनों, जाति वर्ग आधारित नियमों पर विवाह करता है, आखिर क्यों वो अपनी सहज सरल रूपी शिव पार्वती के मिलन को विवाह को पूजता है। शिव जो स्थूल रूपी हैं, तत्व हैं, पार्वती जो साक्षात शक्ति हैं प्रकृति हैं, जीवन की निरनतरता के यानि जन्म के कारण हैं, क्यूँ वरदान माँगता है। जन मानस की कथाओं में शिव का कुल जन्म परिवार सबकुछ अज्ञात है, गौरा जो सशक्त हिमालायराज की पुत्री थी, समाज के विरुद्ध जा कर ऐश्वर्य, सुख त्याग कर घोर तप करने वाली अग्रणी बन गयीं। ताकि कन्यायें अपनी चेतना से वर चुन सकें। ये तप शिव को प्राप्त करने से अधिक समाज की रूढ़ियों को तोड़ने का तप था। जो समाज कुल गोत्र सामाजिक सामर्थ्य, धन पशु देखता था, वहाँ गौरा ने सब त्याग दिया। हर स्त्री आज भी वर रूप में सशक्त स्वाभिमानी शिव को ही देखती है और कामना करती है कि ऐसा पति मिले जो सम्मान करे, अपने बराबर न केवल समझे बल्कि व्यवहार में उतारे भी।

प्रेम करे तो इतना कि संसार कुछ न दिखे।
संतान हो तो गणेश कार्तिकेय जैसी जो जन मानस को मार्ग दिखाये बिना स्वार्थ के। अंचुरा बटोर के धरती पे कलश रखती कामना करती स्त्रियाँ कि अन्न जल धान्य की कभी कमी न हो। शिव गौरा में वो स्वयं को देखती हैं। घर के आंगन में भी सरलता से पूजा करती हैं, किसी पेड़ के नीचे भी शिवलिंग पे जल चढ़ा कर प्रार्थना करती स्त्री शक्ति। किसी चढ़ावे की सामग्री के बिना भी वो पूर्ण होती पूजा से निश्चिंत रहती हैं। स्त्रियाँ जिनको आदि काल से प्रकृति प्रदत्त शक्ति जो प्रजनन यानि संततियो की उत्पति का वर मिला है, स्वतः प्रकृति से जान जाती थीं कि भोजन में क्या खाने योग्य है क्या नहीं। कौन सा कंद मूल खाद्य है, कौन सा अनाज, कहाँ कब उगेगा, किस मौसम में मिलेगा स्त्रियों से अधिक कोई नहीं जानता था। पोखर तालाबों का संरक्षण, स्वतः करती ये स्त्रियाँ, जब महुआ, ढाक, कुश को पोखरा किनारे रोपती हैं, हल छठ का व्रत करके जल स्रोतों तालाब पोखरा किनारे उगने वाले तिन्नी चावल, जल में उगने वाले सिंघाड़े जैसे खाद्य पदार्थों का सेवन करके न केवल उसका संरक्षण करती हैं बल्कि जो सहज सरल रूप में आदि काल से उपलब्ध भोजन था उसकी महत्ता को बचाई रखती हैं। हल को रख देने की परंपरा, ताकि जिस मिट्टी से साल भार अनाज उगता है उसको सम्मान दें , जल में उगने वाला भोजन खाना। ये सब भी तो प्रकृति का संरक्षण है। बैल जो संतान समान था (कुछ साल पहले) तक उसके लंबी उमर की कामना अपनी संतान के साथ करना, ये बताता था कि बिना सह जीवन के, मानुष का जीवन संभव नहीं।
और हर पूजन में सहज सरल गौरा जोचाहे शुद्ध गोबर, या सुपारी या माटी की बना कर पूजा पे रखी जाने वाली हर सामाजिक तबके, बिना अमीरी गरीबी का अंतर किये मान्य हैं।
ये छोटे-छोटे रीति-रिवाज, तीज छठ पूजन पारिस्थितिकी तंत्र (Eco system) के संरक्षण का प्रतीक बन जाते हैं बिना आडंबर के। इसमें अगुआ बनती स्त्रियाँ जो गुफा काल से पोषण पालन (Nurture and Upbringing) करती आ रही हैं उनसे बेहतर कोई नहीं जानता कि उनकी संतान के पोषण के लिए क्या अच्छा है।

भारतीय अध्यात्म या दर्शन में अद्वैत यानि एकेश्वरवाद (ब्रह्म और चेतना एक है) और द्वैतवाद (ईश्वर और आत्मा या चेतना दो अलग हैं) दोनों का सिद्धांत है। इसको ब्रह्मांड में देखें तो Material यानि तत्व और Energy यानि ऊर्जा यानि शक्ति से सब कुछ बना है। Binary यानि 0 और 1, या अगर देखें तो परमाणु में प्रोटॉन जो पॉजिटिव है उसके चारों ओर घूमता इलेक्ट्रॉन जो नेगेटिव है। जीवन में देखें तो स्त्रित्व और पुरुषत्व दो मिल कर एक जीवन को जन्म देते हैं लेकिन एक दूसरे के पूरक होते हुए भी उनका अस्तित्व बना रहता है।
यही द्वैतवाद है यही शिव यानि तत्व और शक्ति यानि एनर्जी है। यही वास्तविक रहस्य है और हर जीव में उपस्थित है। अब हम इसको अल्बर्ट आइंस्टीन का एनर्जी और मास कहें, Binary (0,1) कहें या शिव शक्ति या प्रकृति और तत्व। जीवन इसी से शुरू हो कर इसी में मिल जाना है। यही जीवन चक्र है। प्रकट रूप में या गूढ़ रूप में शिव पार्वती हर जीव में वनस्पति और जंतु जीवन में मौजूद हैं।
हम जितना प्रकृति के समीप होंगे उतना ही चेतना और शिव गौरा के पास होंगे। जिस दिन हमने इसे अनुभव कर लिया, अपनी पारिस्थितिकी तंत्र का जल जीवन और वनस्पति का संरक्षण करना स्वभाव में हो जायेगा। और संरक्षण के लिये पार्वती बार बार जन्म लेंगी हर स्त्री शक्ति के रूप में...

हिंदी के बहाने से

हिंदी दिवस विशेष

डॉ नमिता राकेश
राजपत्रित अधिकारी
एवं वरिष्ठ साहित्यकार

सितम्बर का महीना शुरू हो चुकाथा और हिंदी पखवाड़े का भी। अक्सर हिंदी पखवाड़े और श्राद्ध की तिथियाँ आसपास ही पड़ती है और हम अपने पितरों को पूजने के साथ-साथ हिंदी को भी पूज लेते है। यूँ भी कह सकते है कि दोनों का श्राद्ध एक साथ कर लेते हैं।

हाँ तो बात हिंदी पखवाड़े मौसम की हो रही थी । जगह-जगह सम्मान-सम्मारोह, भाषण और कवि सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा था। ऐसे ही एक बड़े समारोह में बड़े-बड़े हिंदी के समर्थकों से मंच सुशोभित था। एक-एक करके विभूतियाँ हिंदी की आन-बान और शान में कसीदे गढ़ रही थी, साथ ही अपने भी कि उन्होंने भारत और विदेशों में हिंदी के कितने परचम लहराए ..... वो दिन दूर नहीं जब हिंदी विश्व क़ी भाषा बनेगी । तभी मिस सेलीना के नाम की उद्घोषणा हुई।

मिस सेलीना आयीं और उन्होने अत्यंत भाव-विभोर ढंग से एकाग्रचित होकर, आँखें मूँद कर गायित्री मंत्र का पाठ हिंदी में स-स्वर पढ़ा। पूरा हाल तालियों से गूंज उठा। संचालक ने जन समूह को बताया कि मिस सेलिना विदेशी महिला होने के बावजूद हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगी हुई हैं। उनकी सेवाओं को देखते हुए आज इस मंच से उन्हें सम्मानित किया जाता है।

मंच पर विराजमान उन हिंदी समर्थक विभूतियों ने एक-एक करके मिस सेलिना को प्रतीक-चिन्ह, शाल और पुष्प गुच्छ भेंट किये और हर एक के मुंह से निकला - "वेल डन", "कीप इट अप", "यू आर ग्रेट मैडम" - और हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए सम्मानित होती वो मिस सेलीना गद-गद होकर बोलीं - " थैंक्यू सर , आई ऍम ओब्लाइज्ड"

A Vadgalamb és a Szarka

(हंगेरियन लोक कथा का
हिन्दी अनुवाद)

जंगली कबूतर और मुटरी

अनुवादक -
इन्दुकांत आंगिरस

पंचतंत्र की कथाओं से आप सभी परिचित हैं। इन कथाओं में अक्सर जानवरों और पक्षियोंके माध्यम से समाज को नीतिपरक ज्ञान दिया जाता रहा है। पंचतंत्र की कथाएँ सिर्फ़ भारत में ही नहीं अपितु दूसरे राष्ट्रों और भाषाओं में भी उपलब्ध हैं। प्रस्तुत है हंगेरियन भाषा में उपलब्ध ऐसी ही एक लोककथा का हिन्दी अनुवाद जोकि आज भी प्रासंगिक है, विशेष रूप से भारतीय साहित्यिक परिवेश में।

A Vadgalamb és a Szarka

(मुटरी एक प्रकार की चिड़िया होती है जिसका सिर, गरदन और छाती, काली तथा बाक़ी शरीर कत्थई होता है। यह कौए से कहीं बढ़कर चालाक और चोर होती है। इसको अँगरेज़ी भाषा में Magpie कहते हैं ।)

जंगली कबूतर ने मुटरी से कहा कि वह उसे भी घोंसला बनाना सीखा दे क्योंकि घोंसला बनाने में मुटरी उस्ताद है और वह ऐसा घोंसला बनाना जानती है जिसमे बाज़, शिकरा नहीं घुस सकते।
मुटरी ने ख़ुशी ख़ुशी उसे सीखाना स्वीकार कर लिया। घोंसला बनाने के बीच एक एक टहनी को जोड़ते वक़्त मुटरी अपने अंदाज़ में जंगली कबूतर से कहती, " इस तरह रखो , इसतरह बनाओ ! इस तरह रखो , इस तरह बनाओ "
यह सुन कर जंगली कबूतर बोला - जानता हूँ , जानता हूँ , जानता हूँ !
मुटरी एक पल को ख़ामोश हो गयी लेकिन बाद में ग़ुस्से से भर उठी।
अगर जानता है, तो बना ले अपने आप ! - और उसने घोंसला अधूरा ही छोड़ दिया।
जंगली कबूतर उसके बाद से न तो कभी उस घोंसले को पूरा कर पाया और न ही मुटरी उस्ताद से कभी कुछ सीख पाया।

आपका युट्युब लिंक :

Sahitya Sargam

https://www.youtube.com/@SahityaSargam/featured

सुरंगों का खतरा

विनय प्रताप
भूतपूर्व प्रोफेसर, बिजनेस मैनेजमेंट

मेरी पत्नी ने मुझे सवेरे-सवेरे एक बहुत बड़ी बहस में उलझा दिया। मैं बैठा हुआ टी.वी. पर समाचार देख रहा था तभी उन्होंने सुरंगों के सम्बन्ध में अपनी राय व्यक्त करने को कहा। मैंने भी कल समाचार पत्र में राजस्थान सीमा पर सुरंगे होने का समाचार पढ़ा था, अतः मैंने कहा कि ये सचमुच चिंता का विषय है।

मेरी पत्नी ने शिकायत की, "ये चिंता का नहीं कुछ कदम उठाने का समय है। ये सुरंगे हमे कमजोर बना देंगी। इनसे आने वाले कितना आतंकित करते हैं और बर्बादी फैलाते हैं इसका कुछ अंदाजा भी है आपकों?"

मैं समझ नहीं पाया कि आखिर मै क्या कर सकता हूँ। अदना सा मास्टर हूँ और फेसबुक पर कुछ बकवासें लिख कर अपना जीवन धन्य समझ लेता हूँ। राष्ट्रीय समस्याओं पर मैं सिर्फ सरकार को दोषी ठहराने का कार्य कर सकता हूँ, जो मैं अन्ना के मुद्दे पर कई साल कर चुका हूँ।

मैंने कहा, "तो मै क्या कर सकता हूँ। ये तो विशेषज्ञों का कार्य है। वही समस्या का कुछ समाधान खोज सकते हैं।"

"तुम तो हर बात पर राय रखते हो। हक्सले की तरह कोई भी विषय तुम्हारे लिए कठिन नहीं है तो इस विषय पर अपनी विशेषज्ञता क्यों नहीं दिखाते?" पत्नी ने मुझे मर्मस्थल पर कोंचा।

मैंने अपने गुस्से को पिया और बोला ठीक है कल बताऊंगा। पूरा दिन मैंने फिलस्तीन से इसराईल और मेक्सिको से अमेरिका की सुरंगों के बारे में पढ़ा और ये जानकारी इकठ्ठा की कि ये देश इस समस्या का हल कैसे ढूंढ रहे हैं। शाम तक मैं जानकारी के हथियारों से लैस होकर घर वापस आया और पत्नी से पूछा कि वो समस्या पर कब मेरे विचारों को सुनना चाहेगी।

पत्नी बोली, “अभी व्यस्त हूँ, खाने के बाद बात करेंगे।”
खाने के बाद मैंने पत्नी को समस्या के बारे में विस्तार से बताना शुरू किया और बताया कि कैसे समस्या का हल सुरंगों को ढूँढने और उनको भर देना मात्र नहीं है। और ये भी बताया कि उनसे आने वालों को मार देना भी मानवीय हल नहीं है। मेरी पत्नी को मार देना मानवीय न होने पर कुछ शक था, उनका मानना था कि जो हमें नुकसान पहुंचाए उसे मार देने में कोई बुराई नहीं है। परन्तु थोड़ी बहस के बाद मैं मानवीय आचरण पर बाद में बात करने को तैयार हो गया।
पत्नी ने कहा, “यदि हम सुरंगों में कुछ जहरीला भर दें तो कुछ बुराई है।”
“ये तो अमानवीय समाधान है।” मैंने कहा, “और हम इस पर बाद में बात करेंगे।”
पत्नी ने कहा, “अगर हम इन सुरंगों कोभर दें या इनके ऊपर भारी पत्थर रख दें तो क्या होगा?”
“नयी सुरंगें बन जायेंगी।” मेरा उत्तर था।
“अगर हम अपने यहाँ इन दुष्ट प्राणियों को पकड़ने के लिए कुछ रख लें तो” पत्नी बोली।
“सब तो हैं।” मैंने कहा।
मैंने कहा, “मेरी तो ये नहीं समझ आता कि आखिर सुरंगों की क्या आवश्यकता पड़ गयी जब हम ऊपर से आने वालो को ही नहीं रोक पा रहे है या पकड़ पा रहे हैं।”
पत्नी ने कहा, “पकड़ने का कोई फायदा नहीं है फिर और आ जाते है। रोकने की ही व्यवस्था करनी चाहिए”
“गुप्तचर व्यवस्था को दुरुस्त करना और अपनी सीमाओं की चौकसी करना ही दो तरीके हैं जो मेरी समझ में आते हैं। परन्तु सरकारें ना जाने कब इसका संज्ञान लेगी।” मैंने गुस्से में कहा।
“भ्रष्टाचार का तो मै कुछ नहीं जानती।” पत्नी बोली, “पर इतना जानती हूँ कि इन चूहों की परेशानी से तभी कुछ आराम मिलेगा जब तुम ये फेसबुक, व्हाट्सएप छोड़ कर कुछ करोगे।”

वृन्दावन : यात्रा संस्मरण

डॉ नमिता राकेश, वरिष्ठ साहित्यकार

अचानक वृन्दावन जाने का प्रोग्राम बन गया और हम चार लोग मन में भगवान के दर्शन की आस लिए चल दिए वृन्दावन की ओर। इनमें एक सुप्रीमकोर्ट की जज, एक डॉक्टर, एक इंडस्ट्रियल हेड और एक मैं यानी नमिता राकेश । पतिदेव व्यस्तता के चलते नहीं जा सके। बच्चे अपने काम में व्यस्त थे। सुबह 8 बजे के निकले हमने छाता में एक आयुर्वेदिक अस्पताल में डॉ साहब के सौजन्य से पूरी सब्ज़ी और छाछ का स्वादिष्ट भोजन किया और ततपश्चात गरमागरम चाय पीकर वृन्दावन की ओर प्रस्थान किया।

वहां पहुँच कर एक गौशाला का सर्वेक्षण किया। क़रीब 80-90 गाय थीं जिनके लिए भरपूर चारे का इंतज़ाम था। ये वो गाएं थीं जो दूध नहीं देतीं और सड़कों पर बिना चारे के घूमती फिरती हैं । ऐसी मानवता के आगे नतमस्तक हो गई मैं। फिर एक धर्मशाला का अवलोकन किया। इसमें साफ-सुथरे कमरों में लोगों के ठहरने की समुचित व्यवस्था थी। ततपश्चात स्वामी हरिदास जी जो प्रसिद्ध बैजू बावरा के गुरु थे, उनके मन्दिर में दर्शन किये। बहुत ही सात्विक वातावरण था। श्लोक उच्चारण के साथ भभूत लपेटे बहुत से साधू-संत वहां पूजा पाठ कर रहे थे। कुछ साधू उन्हें हाथ से बड़े-बड़े पंखे झल रहे थे। वहीं एक सिद्ध पुरुष एक छोटे से टीले पर भभूत लपेटे बैठे थे । लोग आ कर उन्हें साष्टांग प्रणाम कर रहे थे। मैंने भी उनके समक्ष अपना अभिवादन किया। उन्होंने मुस्कुरा कर आशीर्वाद दिया। वहां पर बन्दरों ने हमारा ज़ोरदार स्वागत किया। वहां से बचते-बचाते हम श्री हरि मन्दिर पँहुचे। द्वार बंद थे। हमारी रिकवेस्ट पर द्वार खोले गए और पण्डित जी प्रकट हुए। श्री हरि जी के विराट दर्शन कर के मन मे एक आध्यात्मिक भावना से ओतप्रोत हमने पूजा अर्चना की। विधिवत पूजा में भाग लेकर मन मे एक शांति का अनुभव हुआ। अपने-अपने प्रसाद लेकर और पण्डित जी को प्रणाम कर हम आगे बढ़े।

तभी हमारे स्थानीय मित्र ने बताया कि यहीं से 5 मिनट की दूरी पर प्रसिद्ध देवरिया बाबा की मचान है। यह वही बाबा हैं जो पैर से आशीर्वाद देने के लिए प्रसिद्ध हैं और हमारे कई राजनेता उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर चुके हैं। बस मेरा मन हो गया कि इतनी पास आ कर भी ना देखा तो क्या देखा ! बस, घुमा ली गाड़ी देवरिया बाबा की मचान की तरफ़। वहां जा कर मन्द-मन्द बहती यमुना का शीतल जल और ऊपर काले कजरारे बादलों का झुंड जैसे हमारे स्वागत को ही तत्पर थे। नदी के उस पार बाबा की मचान साफ दिखाई दे रही थी। हमने प्रणाम किया। फोटो खींचना तो हमारा बनता था सो फोटो सेशन हुआ। मैंने अपने मित्रों को वहीं से लाइव सम्बोधित किया ताकि वे भी इस नज़ारे का आनंद ले सकें। बस, फिर हमारी गाड़ी बिहारी जी के मंदिर की ओर उन्मुख हुई। सम्भावित भीड़ के चलते मन में दर्शन की संभावना कम ही लग रही थी क्योंकि घर वापसी उसी दिन थी। ख़ैर, जब आए हैं तो दर्शन कर के ही जाएंगे-यह सोच कर और वहां के एक स्थानीय मित्र के कहने पर हमने अपनी अपनी पादुकाएं, मोबाइल, चश्मा और अन्य सामान गाड़ी में ही छोड़ कर हम कुछ रुपए अपने साथ पॉकेट में रख कर, खुद को संभालते पदयात्रा पर निकल पड़े।

मुझसे कोई पूछे तो मुझे तो पैदल चलना किसी तपस्या से कम नहीं लगता। आदत ही नहीं है बिल्कुल और सड़क के कंकड़ पत्थरों का दंश मैं बिल्कुल भी नहीं झेल सकती पर दर्शन करने थे तो जाना ही था। तो मित्रों, वृन्दावन की कुंजी गलियों में भीड़ के स्वादिष्ट धक्कों का आनंद लेते हम बढ़ चले दर्शन की आस लिए बिहारी जी के मंदिर की ओर। राह में बिछे शूलों और फूलों को स्वीकारते हुए, अरे अरे, यह तो मेरी एक कविता की पंक्तियां हैं जो मुझे अनायास ही याद आ गईं, मुझे ये अपनी ये पंक्तियां भी याद आ रही थीं कि--"चलने से पहले रास्ते लगते थे पुरखतर, जब चल पड़े तो पैरों के कांटे कुबूल थे।" सचमुच, मेरी लिखी पंक्तियां सजीव हो रहीं थीं, चलते-चलते कुछ समाजसेवक भी मिले जो कुछ रुपयों के बदले जल्दी और वी आई पी दर्शनों के वादे कर रहे थे। हमने उन समाजसेवकों की सेवाएं लेने से इंकार कर दिया और अपने ईश्वर की इच्छा पर छोड़ दिया। एक ही पल में उन समाजसेवकों के चेहरे का रंग बदल गया और वे हमें तिरस्कार की नज़रों से देखते हुए अन्य श्रृद्धालुओं की ओर अपनी समाजसेवा का टोकरा ले कर आगे बढ़ गए। हम भी लोगों से टकराते, अपने-अपने हाथ-पैर और बटुए सम्भालते भीगी हुई कीचड़ युक्त सड़क पर बिहारी जी के दर्शनों की आस में आगे बढ़ गए। थोड़ी ही देर में मन्दिर दिखा तो एक तसल्ली मिश्रित खुशी हुई। पर साहब, अभी कहाँ, अभी तो अंदर की भीड़ से भी तो झूझना था। बस, यहां हमें अलग से कोई प्रयास नहीं करने पड़ा। भीड़ ने हमें खुद ही हमें अंदर धकेल दिया। कब हम शुरू की तीन चार सीढियां चढ़े और कब उतर गए पता ही नहीं चला। अब हमारे सामने लोगों का झुंड था और मानव खोपड़ियों केझुंड के उस पार बिहारी जी कभी-कभार दिख जाते थे। जब कभी पण्डित जी बिहारी जी के दर्शन हेतु मन्दिर के पट खोलते तभी लोगों का हजूम दोनों हाथ उठा कर ज़ोरदार आवाज़ में जयकारा लगाता। बिहारी जी की एक झलक के लिए लालायित हमारी आंखें इस हाथ उठाती भीड़ में दर्शन को तरस गईं। मैं सोचने लगी कि काश मैं अमिताभ होती तो लाइन वहीं से शुरू होती जहां मैं खड़ी होती तो भीड़ में सबसे आगे होने से मैं जी भर कर देर तक अपने श्री बिहारी जी को देख पाती। ख़ैर, ना ही मैं अमिताभ बच्चन थी और ना ही भीड़ मुझसे शुरू थी तो जनाब हम लोगों के उस

हजूम में जितने भी दर्शन कर सके उतने ही अपनी तकदीर समझ कर किसी तरह धक्के खाते उस मंदिर परिसर से बाहर आए और उसी प्रकार पदयात्रा करते हुए अपनी गाड़ी में जब बैठे तो "व्हाट ए रिलीफ़" वाली फीलिंग आई।

बस फिर अगला मुक़ाम था पेड़े की दुकान। पर रास्ता पूछने पर भी हमें पेडों की वो प्रसिद्ध दुकान नहीं मिली और भीड़ के कारण पुलिस विभाग द्वारा लगाए बेरिकेट्स की वजह से हम लगभग वृन्दावन से बाहर ही निकल आए । पेड़े ना ले पाने का दर्द मेरे सहयात्रियों ने महसूस कर लिया औऱ गाड़ी मोड़ कर के एक जगह रोकी तो सामने पेड़ों की कई दुकानें नज़र आईं। मीठे की शौकीन मैंने फटाफट ड्राइवर को पेड़े लाने भेज दिया और फिर और क्या बचा था ? चल दिये घर की ओर । इस छोटी सी आध्यात्मिक यात्रा ने हमारे जीवन का एक दिन सार्थक कर दिया।

साहित्यकार डॉ धनंजय शर्मा
असि. प्रोफेसर, हिंदी
सर्वोदय पी. जी. कॉलेज, घोसी

।।धरती के आइने में चांद।।

धरती के आइने में,
असंख्य रश्मियां बिखेरता
सतमी का बांका चांद
उतर रहा जमीं पर दूधिया रोशनी फैलाते।

श्वेत-श्याम अस्पष्ट चेहरों पर
प्रश्नांकुल निगाहों में घिरा,
सन् तेईस का तिरछा चांद।

सवालों की अदालत में
साहित्य, संस्कृति, कला, विज्ञान
भूगर्भ, अंतरिक्ष पूछते तमाम।

वजह क्या है?
जीवन में चांद है,
पर...चांद पर जीवन है?
साहित्य के आयतों को
पढ़ता हुआ कवि .....
चांद का कुर्ता है, चांद सिकुड़ता है
चांद सी महबूबा का चांद मुखड़ा है।
पूरी अमी की कटोरिया में,
अम्मा का भाई, चांद मम्मा है।

चंद्र मुखी है, चंद्र शेखर है
चलनी से झांकता हुआ
चंद्र पति परमेश्वर है।

चंद्र पुराण है, चंद्र संस्कृति है
चंद्र विज्ञान में हमारी प्रकृति है।
सवालों के अदालत में बैठा हुआ काज़ी.....

सवाल यह नहीं कि
चांद जीवन में है
सवाल यह है कि
चांद पर जीवन नहीं ?.....

सन्नाटे को चीरता हुआ
इसरो का प्रज्ञान मंत्रपूत
धरती का सज्ञान बना दूत
आर्यभट्टीयम, बाराहमिहीरम
न्यूटन, कैपलर, सब थ्यौरम
गया करता पार क्षितिज के अंतरिक्ष !
उतरा चांद पर अनाहूत।

सारे मिथक अब गए टूट,
है नहीं सलोना चंद्र खिलौना
चंद्र मिट्टी है चंद्र पर्वत है
चंद्र है पठार , चंद्र गैसीय गुबार
ऊपर से तप्त चांद भीतर से सिक्त
पानी में चांद जीवन कहानी में चांद,
परत दर परत, चंद्र दीर्घवृत्त
कर रहा चंद्र को अनावृत्त।

वरिष्ठ कवि श्री परमहंस तिवारी ´परम´ वाराणसी

कुएँ का मुँह हुआ अब तंग है
रहट की बाल्टी पर जंग है
छेद पुरवट में हो गए अनगिन
न खूंटे को बयल का संग है
रह गया केवल संस्मरण है
गाँव का हो रहा शहरीकरण है।

घूर पर घर बनाये जा रहे हैं
स्मृतियों को मिटाये जा रहे हैं
बगीचे कट रहे हैं तेजी से
नये साधन जुटाये जा रहे हैं
रीतियों का रिवाजों का क्षरण है
गाँव का हो रहा शहरीकरण है।

न ही खपरैल ना ही गौरैया
न द्वारे नीम ना कजरी गैया
बड़े के साथ रहते हैं पिताजी
हिस्से में छोटे के आयी मैया
अजब रिश्तों का ये वर्गीकरण है
गाँव का हो रहा शहरीकरण है।

छल से सब कुछ जुटाना चाहते हैं
दाव बस आजमाना चाहते हैं
कपट में मात खा जाये शकुनी भी
सिंहासन हथियाना चाहते हैं
ज्येष्ठ कुरु के कुचक्र में करण है
गाँव का हो रहा शहरीकरण है।

जीवन के अध्याय © डॉ अनूपा कुमारी नवादा, बिहार

सत्य - असत्य के बीच
उधेड़-बुन में उलझा मानव
कभी दिल तो कभी दिमाग से
बहुत कुछ सोचता है
सोचता ही रहता है
किन्तु परिणाम तक नहीं पहुंच पाता है
पता है क्यों ?
क्योंकि,
सत्य के तथ्य को
पहचानने से पहले ही
अंतिम निर्णय पर रूक जाता है
सत्ता के गलियारे में
इसका विचलन सबसे ज्यादा है
आँखें मुंदे सभी कानों सुना हीं मानते हैं
अन्वेषण की कोई आवश्यकता समझते ही नहीं
जाने कितने इसके बलि - वेदी पर टंगते हैं
न्यायकर्ता तटस्थ और निष्पक्ष हो
तभी सही न्याय संभव है
लेकिन, विडम्बना यही है
कि सबकुछ झीने आवरण में ढंका है
सत्य-असत्य के बीच
उधेड़-बुन में उलझा मानव.....

मैं ऐसी ही हूं © प्रतिमा सिंह, मऊ

हां मैं बोल जाती हूं ज्यादा कभी-कभी,
क्योंकि मैं खुद को संभालना नहीं जानती।
हां मैं कर जाती हूं नादानियां कभी-कभी
क्योंकि मैं समझना नहीं जानती।
हां मैं बन जाती हूं अब भी
मां,पापा के सामने बच्ची
क्योंकि मैं बड़ी होना नहीं जानती।
हां मैं रो देती हूं, बहुत जल्द
क्योंकि मैं अंदर कुछ रखना नहीं जानती।
हां मैं खुश भी हो जाती हूं बहुत जल्द
क्योंकि मैं खोना नहीं जानती।
हां मैं मान जाती हूं अक्सर
क्योंकि मैं रूठना नहीं जानती।
हां मुझे अब दोस्त-यार नहीं पसंद
क्योंकि मैं धोखा नहीं जानती।
हां हैं मुझमें कुछ खामियां
क्योंकि मैं सीखना नहीं जानती।
हाँ हो जाती हूँ मैं कभी-कभी
सोशल, प्रैक्टिकल, स्टुपिड सी
क्योंकि मैं खुद को बदलना नहीं जानती।

पर्यावरण पर दोहे © सुविधा पंडित अहमदाबाद

साहित्य भूषण सम्मान

नित्य पिघलता हिम रहे,मानव का ही काज।
शिव हिम -आलय पर बसे,क्रोधित होते आज।।

रे मानव अब जाग जा,तज दे लोभ अपार।
तेरा ही पर्यावरण,कर ले इससे प्यार।।

स्वार्थ की सब दौड़ है,प्रातः हो या शाम।
बिन पानी नव पीढ़ियाँ ,कर न सकेंगी काम।।

प्रलयंकारी दैत्य ये,सब कुछ खाता जाय।
भूमि,मृदा,जल,वायु में ,गहरे तक घुल जाय।।

क था

और वो चला गया...

लेखिका -ज्योत्सना प्रवाह
वरिष्ठ साहित्यकार

यह कहानी है एक औरत की... जिसमें वही चेतना बसती थी जो आम औरतों में होती है बस, उसकी किस्मत अलग थी उसका नाम था तितिक्षा। प्रस्तर शिल्पी अपने साधना ग्रह में बैठा प्रतिमाएं तराशता रहता है निरंतर, अविश्रांत... दैववशात यदि कोई प्रतिमा संपूर्ण निर्मिती के पहले ही सहसा खंडित हो जाए तो रासायनिक अवलेपों से दरारे बंद कर दी जाती है फिर वह प्रतिमा बाहर से सर्वथा अंग दोष रहित नजर आती है किंतु, उस दरार की चिलकन क्या उसे हर क्षण अभिशप्त नहीं करती रहती? उसी अबूझ कसक के साथ घर बसाया था उसने प्रहर सचदेवा के साथ... कैसा विचित्र जुड़ाव था वह... काया का संपूर्ण समर्पण भाव था पर,मन फिर रह रहकर इस कदर उचाट क्यों हो जाता था? पति के सारे काम करना, लोगों से बातें करना,पति के मित्रों से मिलना यह सारे काम आराम से करती थी पर, यह सब करते हुए भी एक बेचैनी सी पूरे अस्तित्व पर छाई ही रहती थी और इस तरह वह बोलने भी कम लगी थी और सुनने भी.... यह नहीं था कि उसे अपने पति से कोई शिकायत थी या नाते रिश्तेदारों से कोई आपत्ति थी।प्रहर दुनिया के उन मनुष्यों में से थे जो निरे भौतिकवादी होते हैं, जज्बातों की नदी की गहराइयों में उतर कर डूबने से डरते हैं,क्या महत्व है भावनाओं को व्यक्त करने का वह नहीं जानते,वह जीवन के तंग या फटे हुए कुर्ते को बिना ठीक किए ही पहन लेते हैं।जो दो और दो चार की गिनती के आगे किसी सपने का बिंदु जोड़ने को जिंदगी की फिजूलखर्ची समझते हैं और अपना आत्म विश्लेषण करने की तो कभी जरूरत ही नहीं समझते।

तितिक्षा संसार की उन लोगों में से थी जो जीवन की कतरनों को जोड़ जोड़ कर अपने अंगों की नाप खोजते रहते हैं। वह अति संवेदनशील थी खुद के प्रति भी और दूसरों के प्रति भी,उसका मानना था कि भावनाओं की अभिव्यक्ति एक कला है जो जीवन से धीरे-धीरे सीखी जा सकती है; जो अपनी जिंदगी की इकाई के आगे जोड़ने के लिए हमेशा सपनों के बिंदु ढूंढते रहते हैं। तितिक्षा को नहीं लगा था कि प्रहर की बनावट गलत थी और उसकी अपनी बनावट ठीक थी, वह केवल यह सोचती थी कि दोनों की बनावट अलग किस्म की थी जिस प्रकार वह सचदेवा की बनावट को नहीं बदल सकती थी उसी तरह वह अपनी बनावट को भी नहीं बदल सकती थी, उसकी हालत ऐसी थी कि जैसे लहरों की मनमानी से कोई नाव किसी अनजान टापू पर आ लगी है जहां वह यात्री किसी को पहचानता नहीं है बस टकटकी लगाए सभी ओर देखता है उसे यह भी पता था कि जब किसी लड़की की विवाह की नौका किसी टापू में पहुंच जाती है तो लड़की को बस वही रहना होता है और फिर उस नौका को किसी विचार का चप्पू लगाना उसके लिए वर्जित होता है इसलिए उसने कभी चप्पू की तरफ देखा ही नहीं... हां वह सोती तो देखती कि वह दौड़ रही है उसके पीछे लोग दौड़ रहे हैं और अंत में सामने समंदर है,लोग हंस रहे हैं और पूछते हैं अब कहां जाओगी..?

घबरा कर वह पानी पर पैर रखती है तो देखती है कि पानी तो नरम बिछौने जैसा है और वह बड़ी सहजता से पानी पर चलती जा रही है उस पार कोई है जो बाहें फैलाए उसकी प्रतीक्षा में खड़ा है लेकिन उसका

क्र म श:

चेहरा साफ साफ नजर नहीं आ रहा है, शुरू-शुरू में वह इस सपने से चौंक पडती थी।
धीरे-धीरे जैसे उसे लगने लगा था कि उसके शरीर में एक नहीं दो स्त्रियां हैं एक जिसका नाम तितिक्षा था जो किसी की बेटी थी, श्री प्रहर सचदेवा की पत्नी थी, जिसकी जाति हिंदू थी, देश भारत था और जिस पर कई नियम और कानून लागू होते थे और दूसरी जिसका नाम औरत के सिवा और कुछ ना था जो धरती की बेटी थी और आकाश का वर ढूंढ रही थी, जिसका धर्म प्रेम था और देश-दुनिया थी और जिस पर एक तलाश को छोड़ कोई नियम कानून लागू नहीं होता था फिर धीरे-धीरे उसे इस स्वप्न में आनंद आने लगा बाकी सब नियम रह गया फिर उस स्वप्न में कुछ और जुड़ गया वह सपने वाला बुत उससे बातें करने लगा और फिर एक घटना घट गई। वह किसी के घर रात्रिभोज में गई वहीं एक आदमी से मुलाकात हुई, दिखने में साधारण शक्ल सूरत, कद काठी सामान्य थी मगर बिल्कुल उसके सपनो वाले बुत की तरह उसकी आंखें थी, गहरी और बोलती हुई, वहीं आवाज़ थी, नरम और मधुर...शालीन व्यक्तित्व। उसने भी उसे उसी तरह मुस्कुरा कर देखा जैसे उसका सपनों वाला बुत देखा करता था, वह कितनी देर उसे देखती रही थी बल्कि शायद देख भी नहीं रही थी उसकी आंखों में उतर कर कुछ और भीतर कहीं व्यक्ति को ढूंढ रही थी पढ़ रही थी...जो वह दिखाई नहीं दे रहा था। वह कितनी देर उसे देखती रही थी फिर पता चला कि उसका नाम स्वप्निल था तितिक्षा ने चिकोटी काटी खुद को कि कहीं यह सपना तो नहीं था? यह सपने जैसा सच था, उसका मन शायद वर्षों से कुछ मांग रहा था, सूखे पड़े जीवन के लिए... मांग रहा था थोड़ा पानी और अचानक बिन मांगे ही सुख की मूसलाधार बारिश मिल गई, प्यास बुझी थी उसकी, वह एक अनजानी दूसरी दुनिया में खो गए उसके मन के भीतर, उसकी देह के भीतर,क्या कुछ हो गया वह समझ नहीं पा रही थी प्यास क्यों बुझ रही है? वह भी नहीं समझ रही थी, उसने सपने वाले अपने बुत का नाम स्वप्निल रख दिया।

फिर जब एक तितिक्षा अपने पति के पास बैठी होती दूसरी स्वप्निल के पास बैठी होती, एक तितीक्षा के पास शरीर का अस्तित्व था दूसरी तितिक्षा के पास शरीर का अस्तित्व नहीं था, पहले पहल एक तितिक्षा दूसरी से लंबी-लंबी बहस छेड़ बैठती थी और दूसरी तितीक्षा कभी हंस कर-कभी रो कर चुप रह जाती थी। पर दूसरी तितिक्षा का दिल इतना अबोध था, आंसू इतने द्रवित होते थे, शब्द इतने दारुण होते थे कि पहली तितिक्षा को उस पर प्यार आने लगा था, अब दोनों अंतरंग सहेलियां हो गई थी, अब वह कल्पना की जगह सचमुच स्वप्निल से बातें करना चाहती थी, उससे मिलना चाहती थी फिर एक दिन उसने दोस्तों के साथ स्वप्निल को भी चाय पर बुलाया । सभी गपशप कर रहे थे तभी एक मित्र ने कहा कि मेजबान की तारीफ में सभी लोग एक एक कागज पर लिख कर दे देखें कौन कितना अच्छा लिखता है? सभी ने लिखकर दिया जब स्वप्निल की बारी आई तो उसने हाथ में ली हुई कलम से खेलते हुए तितिक्षा की तरफ देखा और धीरे से तितिक्षा के कान के पास मुंह करके बोला मुझे लिखना नहीं आता क्योंकि किसी के दिल की कोई भाषा नहीं होती मुझे तो बस आंखों की भाषा पढ़नी आती है...और तितिक्षा ने पहली बार जाना की आंखें मौन रहकर कितने स्पष्ट बातें कर जाती हैं और वह कांप कांप गई थी मगर, उसने महसूस किया कि बचपन से जिस उदासी ने उसके अंदर डेरा जमा रखा था वह आज दूर चली गई थी...
एक उत्साह, एक उमंग से भर गई थी, भेंट कितने समय की हुई इसकी अपेक्षा वह किस भाव से हुई इसका महत्व अधिक होता है... सबके चले जाने के बाद स्वप्निल के जूठे प्याले में बची हुई ठंडी चाय का घूंट लेकर सोचा -यह क्या, मैं दीवानी हो गई हूं, जैसे उसने ऐसी वस्तु का आस्वादन कर लिया था जो पहले कभी नहीं किया था। फिर कितने दिन बीत गए बिल्कुल चुपचाप! वह कामों में खुद को इतना व्यस्त कर लेना चाहती थी कि उसके शरीर में शक्ति ना रहे और बिस्तर पर गिरते ही नींद आ जाए।

एक शाम वह घर में अकेली थी कि दरवाजे पर दस्तक हुई दरवाजा खोला तो सामने स्वप्निल खड़ा था, उसकी जो दृष्टि तितिक्षा की ओर उठी थी वह असावधान नहीं थी, वह मूक भी नहीं थी... आंखों में ज़बान उग आयी थी, वह एक पुरुष की मुग्ध दृष्टि थी जो नारी के सौंदर्य के भाव से दीप्ति थी, दृष्टि तितिक्षा की आंखों पर टिकी थी, उसकी आंखें झुक गई पर इस तथ्य के प्रति पूरी सचेत थी कि युवक की दृष्टि ने अब संकोच छोड़ दिया है,वह ढीठ हो गई है, युवक की दृष्टि जैसे देखती नहीं थी, छूती थी,वह जहां से होकर बढ़ती थी जैसे रोम-रोम को सहला जाती थी, तितिक्षा का शरीर थरथर कांप रहा था, उसकी समझ में बिल्कुल नहीं आ रहा था कि उसका मन इतना घबरा क्यों रहा है और पहली बार किसी पुरुष से नहीं मिली थी ना पहली बार किसी पुरुष के सानिध्य में आई थी, उसने पुरुष दृष्टि का ना जाने कितनी बार सामना किया था मगर यह दृष्टि उसे व्याकुल कर रही थी, स्वप्निल की दृष्टि में प्रशंसा थी और वह शालीन प्रशंसा तितिक्षा के शरीर को जितना पिघला रही थी उसका मन उतना ही घबरा रहा था वह लगातार अपने मन से पूछ रही थी - यह सब क्या है? वह इतना डर क्यों रही है?

"आप बहुत सुंदर है तन और मन दोनों से" स्वप्निल ने धीरे से मुस्कुराते हुए कहा।

अपने रूप की प्रशंसा सबको अच्छी लगती है और फिर वह भी नारी.....युवक उसके रूप की प्रशंसा कर रहा था और वह ऐसे भयभीत थी जैसे कोई संकट आ गया हो, उसका मन उसे लगातार सावधान कर रहा था अचानक जैसे वह सचेत हुई, उसके हाथ कांप रहे थे उसकी हालत उस नाविक जैसी थी जिसके चप्पू सीधे नहीं पड रहे थे नाव डोल रही हो तो भी कोई आश्चर्य नहीं.. वह अपने रास्ते से भटक गई है और ऐसे क्षेत्र में पहुंच गई है जहां निर्जन द्वीप है और द्वीप मे कमल ही कमल खिले हैं, नाव द्वीप की ओर बढ़ती जा रही है और वह उसे रोकने में असमर्थ है,वह जैसे सम्मोहित सी हो गई थी पर उसका विवेक लगातार हाथ में चाबुक लिए उसे पीट रहा था,यह ठीक नहीं है तितिक्षा... यह ठीक नहीं है...संभल जा.. अब वह अंदर आकर सोफे पर बैठ चुका था वह भी यंत्र चालित सी सामने के सोफे में धंसी जा रही थी, तितिक्षा सोच रही थी कि विधि का विधान भी कितना नाटकीय है, किसी को किसी भी प्रकार का पूर्वाभास नहीं होता कि कौन सी घटना आगामी किस बड़ी घटना इक्षा या प्रवृत्ति आगामी बड़ी घटना का कारण बन जायेगी, उसके होश शायद बस में ना आते, पर तभी स्वप्निल ने कहा कि "उस दिन गलती से आपका कलम मेरे साथ चला गया था" उसने कलम निकालकर तितिक्षा की ओर बढ़ा दिया, उसके मन में आया कि कह दे कि आपका क्या विचार है गलती करना सरल बात होती है कलम और स्त्री में बड़ा अंतर है स्वप्निल, और फिर दुनिया में हर कोई गलती कर सकता है, इस औरत को गलती करने का भी अधिकार नहीं होता। कई बार जानदार वस्तुओं से बेजान वस्तुएं ही अच्छी होती है मगर कुछ भी कह नहीं पाई, मोहब्बत में सारी शक्तियां होती हैंएक बस बोलने की शक्ति नहीं होती, केवल इतना कहा कि - "यह जहां चाहता है इसे वहीं रहने दीजिए ना..."

तभी इतने दिनों तक लौटाने नहीं आया था उसने कहा। थोड़ा आगे झुक कर मुझे ध्यान से देखा और बोला -"आप अपना महत्व नहीं जानती, कैसे जानेंगी? आपके पास अपनी नजर है, मेरी नहीं.. मेरी नजरों से देखेंगी तो जानेंगे कि आप क्या है? पता है? आपको देखा तो मुझे यह समझ में आया कि मां की आवश्यकता पुरुष को तभी तक होती है जब तक वह अबोध होता है, बोध होने पर उसे मां नहीं प्रियतमा की आवश्यकता होती है जिससे वह अपने वयस्क प्रेम की प्रतिध्वनि पा सके".... और हाथ की सिगरेट बुझाकर तितिक्षा की ओर इतनी उदास नजरों से देखा कि तितिक्षा को लगा था वह एक औरत नहीं थी एक सिगरेट थी जिसको स्वप्निल ने एक ही नजर से सुलगा दिया था। वह चला गया।

उस दिन के बाद से वह तितिक्षा नहीं रही थी एक सुलगती सिगरेट बन गई थी जिसे स्वप्निल ने सुलगा दिया था और पीने का अधिकार नहीं लिया था।

(कथा क्रमशः अगले अंक में आगे .....)